OUR PUBLICATIONS

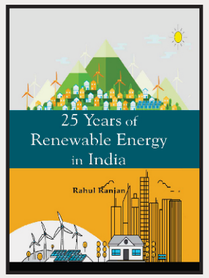

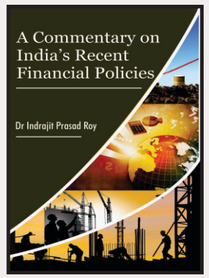

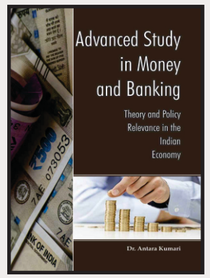

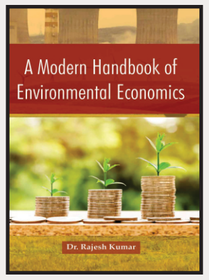

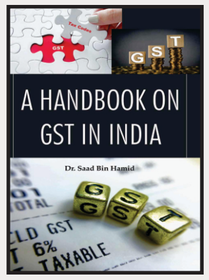

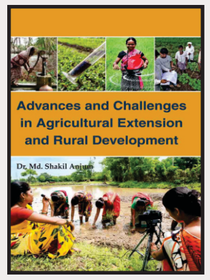

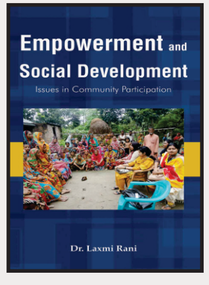

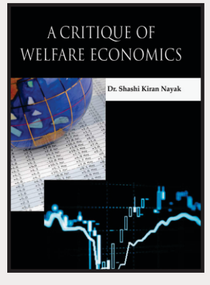

Iobus Press

448, Pocket-V, Mayur Vihar, Phase-I, Delhi-110091 (INDIA)
Ph.: 011-22753916

ISSN 0975-119X

UGC-CARE GROUP I LISTED

वर्ष 11 अंक 5 सितंबर-अक्टूबर 2019

दृष्टिकोण

कला, मानविकी एवं वाणिज्य की मानक शोध पत्रिका

IMPACT FACTOR: 5.051

India's Leading Refereed Hindi Language Journal

दृष्टिकोण

कला, मानविकी एवं वाणिज्य की मानक शोध पत्रिका

संपादक

डॉ. अश्विनी महाजन

रीडर, डी.ए.वी. पी.जी. कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

दृष्टिकोण प्रकाशन

WZ-724, पालम गांव, नई दिल्ली-110045

दृष्टिकोण

आधुनिक बिहार का सृजन: एक ऐतिहासिक विश्लेषण–प्रो० (डॉ०) अर्चना कुमारी साह 1902
धर्मवीर भारती के कथा साहित्य में 'परिवार एवं समाज में नारी की स्थिति'–आलोक कुमार 1906
विश्वविद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों की ऑनलाइन शिक्षण के प्रति अभिरुचि का अध्ययन–डॉ० क्षमा पाण्डेय; डॉ० नीरज कुमार 1909
भारतीय चित्रकला के प्रारम्भिक स्वरूप एवं उसकी विशेषताओं का अध्ययन–डॉ० अरविन्द कुमार यादव 1913
संयुक्त परिवार पर आधुनिकीकरण का प्रभाव–संतोष विश्वकर्मा 1916
"उच्चत्तर माध्यमिक विद्यालय के विशिष्ट विद्यार्थियों के शालेय समायोजन एवं परीक्षा संबंधी चिंता का अध्ययन"–दीप्ति सिंह राठौर 1919
पं० दीन दयाल उपाध्याय जी का शैक्षिक एवं सामाजिक योगदान–पूजा सिंह 1923
21वीं सदी की महिला आत्मकथाकारों के स्वर: एक सूक्ष्म दृष्टि–प्रो० (डॉ०) शिव शंकर मण्डल 1926
गरुड पुराण में वर्णित औषध विज्ञान (भैषज्यशास्त्रों के विशेष सन्दर्भ में)–संजय कुमार 1929
तर्क की प्रधानता: रेने देकार्त का इतिहास पर आक्षेप एवं विको का प्रत्युत्तर–अभय पाण्डेय 1931
शिकंजे का दर्द: दलित एवं पराधीन स्त्री की मुक्तिकामना–डॉ० रीता चौधरी 1936
दलित साहित्य: नये क्षितिज की खोज–प्रो० सूरज बहादुर थापा 1939
भारतीय राजनीति में पूर्व प्रधानमंत्री चन्द्रशेखर का योगदान–मनोज कुमार 1943
समाजशास्त्र का स्वरूप एवं परिभाषा–डॉ० शशि गुप्ता 1946
एचआईवी-एड्स का सामाजिक कलंक: समाज की भूमिका–चंद्रेश कुमार 1949
बच्चन सिंह की साहित्येतिहास दृष्टि–सत्य प्रकाश सिंह 1956
वेदकालीन कृषि अर्थव्यवस्था: एक अध्ययन–डॉ० राहुल कुमार संतोष 1959
19वीं सदी में भारतीय नारी व समाज में व्याप्त कुरीतियाँ–डॉ० ललित मोहन शर्मा; श्रीमती लक्ष्मी सक्सेना 1963
भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के स्वरूप एवं विशेषता–डॉ० दिवाकर प्रसाद 1965
21वीं सदी के हिंदी साहित्य में किन्नर समाज एवं संस्कृति: एक अध्ययन–डॉ० हेमन्त पाल घृतलहरे 1968
"खरपतवार पौधों के फाइटोकेमिकल विश्लेषण" का अध्ययन–श्रीति मजुमदार 1971
मुहाजिर राष्ट्रवाद की मिथ्यता तथा व्यवहारिकता–डॉ० कमला 1978
खनन क्रियाओं का पर्यावरण पर प्रभाव: झारखंड के विभिन्न जिलों के विशेष संदर्भ में–सुनील कुमार साव 1983
पद्मा सचदेव के साहित्य में स्त्री विमर्श–डॉ० रत्नेश कुमार यादव; शाश्वत आनंद 1986
अनुसूचित जातियों की स्थिति की समीक्षा: दरभंगा सदर प्रखंड का एक भौगोलिक अध्ययन–डॉ० रतन कुमार झा; मृत्युंजय कुमार 1990
भारत में बाल श्रम की रोकथाम–डॉ० ललिता शर्मा 1994
रामायण काल में पर्यावरण का महत्व: एक दार्शनिक विमर्श–डॉ० मनोज कुमार यादव 1998
बौद्ध कालीन आर्थिक संगठन–डॉ० सूर्य प्रकाश तिवारी; सुरेन्द्र कुमार शर्मा 2000
स्वतंत्रता के पश्चात हिंदी क्षेत्र में अनुवाद की उपयोगिता–डॉ० राजश्री पी. मोरे 2003
1866 के संयुक्त प्रांत में औपनिवेशिक वन कानून–महेन्द्र सिंह 2007
बकरी नाटक मे विद्रोह एवं क्रांति का स्वर–ममता चावला 2011

बकरी नाटक मे विद्रोह एवं क्रांति का स्वर

ममता चावला

एसोसिएट प्रोफेसर

जन चेतना के प्रतिनिधि साहित्यकार सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, हिंदी साहित्य के उन महत्वपूर्ण साहित्यकारों में से एक हैं जिन्होंने, अपने काव्य, नाटक, कहानी, उपन्यास, पत्रकारिता, संस्मरण और निबंधों के माध्यम से, लोक जीवन से जुड़ी समस्याओं और राजनीतिक-सामाजिक परिवेश को सार्थक और प्रभावी अभिव्यक्ति दी है। उनकी रचनाएं जन सामान्य के जीवन संघर्ष को बड़ी ईमानदारी एवं यथार्थ के साथ अभिव्यक्त करती हैं। सर्वेश्वर दयाल सक्सेना ने समसामायिक समस्याओं के प्रति न केवल अपनी जागरूकता का परिचय दिया बल्कि साहसिक दृष्टिकोण के साथ सामाजिक-राजनीतिक अव्यवस्था, और उन सब कुरीतियों, जो सामाजिक जीवन को विकट बनाने के लिए जिम्मेदार हैं, के प्रति अपना विरोध बुलंद किया। उनकी इस रचना धर्मिता के विषय में डॉक्टर कृष्ण दत्त पालीवाल कहते हैं-

"अपने समय की पूरी गूँजों-अनुगूँजों को यह रचनाकार पकड़ता है। सर्वेश्वर का रचना-समय अपना एक महत्त्वपूर्ण इतिहास निर्मित करता है। कविता-नाटक, गद्य-साहित्य निबंध, समीक्षा कथा-साहित्य सभी विधाओं मे सर्वेश्वर अपने समय के अनुभव को रचतें हैं तथा जिंदगी के मूलभूत प्रश्नों से जूझते हुए वे समय का अतिक्रमण करते हैं। स्वाधीनता के बाद का 'मोहभंग', 'मानवी अस्तित्व का संकट', 'सत्ताश्की तानाशाही', 'संस्कृति पर संकट', 'आधुनिकता', 'श्रम के परायेपन की पीड़ा'- सभी पर वे निरंतर विचार करते हैं। भारतीय समाज भीतरी हलचल और कल्लाहट, नेहरू-युग की मूल्यांधता और बाद के युगों में विदेशी पूँजी पर भरोसा, इन पर सर्वेश्वर का रचनाकार मन कसकता-दु:खता है। सर्वेश्वर का पूरा सृजन मानव-मुक्ति की आकांक्षा और स्वाधीनता चेतना की ध्वनि लिए हुए है।"[1]

वस्तुतः सन 1947 में हमें, आजादी तो मिली लेकिन फिर धीरे-धीरे लगने लगा कि यह आजादी, आजादी नहीं है। सत्ता की लूट की आजादी है। और इस सत्ता की लूट ने आम आदमी की आशा-आकांक्षाओं को जल्द ही निराशा में बदल दिया। देश की हालत दिन-प्रतिदिन बिगड़ती चली गई। आम आदमी का जीवन विभिन्न प्रकार की कठिनाइयों, समस्याओं और अभावों से त्रस्त हो गया। असामाजिक तत्व कभी समाजवाद, कभी प्रजातंत्र, और कभी गांधीवाद के नाम पर निरंतर आम जन का शोषण करने लगे। पूंजीपत्तियों के हाथों शोषित आम जन त्राहिमाम कर उठा। ऐसे में, परिवेश के प्रति असंतुष्टि, आक्रोश और विद्रोह का स्वर, होना स्वाभाविक ही है। स्वयं सर्वेश्वर दयाल सक्सेना ऐसे परिवेश के लिए कहते हैं कि ''जब चारों ओर के लोग इस बात पर कमर बांधे हो कि वे आपकी बात नहीं समझेंगे, तब आपके सामने दो ही रास्ते रह जाते है, या तो चुप रहे अपनी बात न कहें या फिर इस ढंग से कहे कि सुनने वाला तिलमिला उठे, उनकी कलाई उतर जाये।''[2]

ऐसे में आम आदमी की पीड़ा को, आम आदमी की जबान, में आम आदमी के बीच ले जाने का कार्य लेखक ने अपने बहुत ही महत्वपूर्ण नाटक बकरी द्वारा किया। इस बात को स्पष्ट करने के लिए बकरी नाटक की भूमिका में कहा गया है कि "विदेशी दासता से मुक्ति भारत की गरीब जनता के लिए अपने नेताओं द्वारा छले जाने की शुरुआत थी। यह एक विडम्बना ही थी कि छलने के सबसे ज्यादा तरीके नयी सत्ता ने उससे सीखे जिसने राजनीति में चरित्र का महत्त्व स्थापित करना चाहा था।

बकरी महज एक व्यंग्य नाटक नहीं, हमारी स्वाधीनता की तलछट का चित्र है- वह तलछट जो समय बीतने के साथ गहरी होती चली गयी है, और अब भी चुनौती दे रही है। नाटक के संगीत-नृत्य में पाठक मग्न रहता है और जटिल प्रतीक सहजता से खुलने लगते हैं। राजनीतिक ढाँचे की पोल-पट्टी को न केवल उधेड़कर दिखाया गया है, बल्कि उस समाज का विकृत चेहरा भी उभारा गया है जो आजादी के दो दशकों के बाद बना था।"[3]

नाटक की भूमिका से यह बात स्पष्ट हो जाती है। कि शोषण का जब तक विरोध नहीं किया जाएगा तब तक अधिकारों को भी सुनिश्चित नहीं किया जा सकता।। अपने अधिकारों की लड़ाई हमें ही लड़नी पड़ेगी, और विरोधी ताकतों के खिलाफ हुंकार भरनी पड़ेगी। इसी विरोधी स्वर की बात करते हुए सर्वेश्वर दयाल स्वयं कहते हैं- "बकरी नाटक गांधी विचार का नाटक नहीं है वह मेरी क्रांतिकारी और सत्ता विरोधी स्वभाव की स्वाभाविक अभिव्यक्ति है।"[4] और उनका यह विरोधी स्वर नाटक में सर्वत्र देखा गया है।

बकरी नाटक की शुरुआत ही नट के विरोधी स्वर की अनुगूंज से हुई है। वह मंगलाचरण को राजनीतिक संदर्भ से जोड़कर गाता है।

"पांच देव सम पांच दल, लगी ढोंग की रेस
जिनके कारण हो गया, देश आज परदेस।"[5]

हम सदियों से विदेशी शक्तियों के शोषण के शिकार तो होते ही रहे लेकिन स्वतंत्रता की प्राप्ति के बाद भी स्थिति में कुछ खास परिवर्तन नहीं हुआ। शोषण करने वालों के केवल चेहरे ही बदले हैं। राजनीति में गुंडों और अराजक शक्तियों का नेतृत्व हो गया था। जिन्होंने मासूम, अशिक्षित और अज्ञानी जनता की मनोभावों का लगातार फायदा उठाया और उन पर अत्याचार करते रहे। राजनीतिक दलों ने केवल ढ़ोग का प्रसार किया, जिसके कारण अपने देश में रहते हुए भी, लोगों को ना सुविधाएं मिल पाई और ना उनके अधिकार। "यह नाटक सत्ता के झूठे जनतंत्र वाद को और उसके घिनौने चरित्र को बड़े निर्ममता के साथ